2 अयोध्या कांड

राम के अभिषेक की तैयारी और कैकेयी के दो वरदान

भरत के मामा युधाजित अपने पिता की आज्ञा से भरत को लेने के लिए अयोध्या आए थे। जब अयोध्या में पहुंचकर उन्हें बारात का समाचार मिला तब वे जनकपुरी जा पहुंचे। जनकपुरी से लौटने पर कुछ दिन बाद राजा दशरथ ने भरत और शत्रुघ्न को कैकेय देश भेज दिया। नाना और मामा ने उन्हें बड़े लाड़ प्यार से रखा। भरत की इच्छा अपने नगर लौटने की होती तो, उनके नाना अनुरोध कर उन्हें रोक लेते। इस तरह ननिहाल में रहते भरत और शत्रुघ्न को काफ़ी दिन हो गए। अयोध्या में केवल राम लक्ष्मण रहे।

अब राम राज-काज में पिता का हाथ बंटाने लगे। राम सदा दूसरों की भलाई की बात सोचते और सदाचार का पालन करते। जैसे वे नम्र और विद्वान थे वैसे ही शूरवीर और पराक्रमी भी थे। छोटे-बड़े सबसे वे प्रेमपूर्वक मिलते थे। क्रोध में भी किसी से दुर्वचन नहीं बोलते थे। प्रजा उनको बहुत चाहने लगी। राम के कामों से राजा दशरथ भी बड़े प्रसन्न थे। वे अब बूढ़े भी हो चले थे। उन्होंने निश्चय किया कि राम को युवराज बना दिया जाए। राजा ने मंत्रियों से सलाह की और कैकेयराज और मिथिला नरेश को छोड़कर सब मित्र राजाओं को अयोध्या आने का निमंत्रण भेजा जिससे उनकी सम्मति भी मिल जाए।

निश्चित समय पर सभा-भवन में आमंत्रित राजागण आ गए। अयोध्यावासी भी उपस्थित हुए। राजा दशरथ ने सबके सामने राम को युवराज बनाने का प्रस्ताव रखा। सबने एक स्वर से राम की प्रशंसा की और उनके गुणों का वर्णन करते हुए प्रस्ताव का समर्थन किया। राजा ने सबका धन्यवाद करते हुए कहा कि मैं कल ही राम का अभिषेक करना चाहता हूं। आप लोग उत्सव में सम्मिलित हों। उस घोषणा के बाद उन्होंने सुमंत्र को भेजकर राम को सभा में बुलवाया। राम के आसन ग्रहण करने पर राजा दशरथ बोले- "जनता ने तुम्हें अपना राजा चुना है। सावधानी से तुम राजधर्म का पालन करना और इस कुल की मर्यादा की रक्षा करना।"

सभा विसर्जित कर राजा भवन में चले गए। राम से एकांत में बात करने के लिए उन्होंने फिर राम को बुलवा लिया। वे बोले, "बेटा अब मैं बूढ़ा हो गया हूं। न जाने मेरी आँखें कब बन्द हो जाएं। भरत इस समय ननिहाल में है। मैं चाहता हूं कि उसके दूर रहते रहते यह काम हो जाए। यों तो भरत नेक और नीतिवान है, फिर भी मनुष्य के मन का क्या ठिकाना ? तुम आज की रात सावधान रहना। संयम से भी रहना। तुम जानते हो कि शुभ कार्यों में तरह-तरह की विघ्न बाधाएँ पड़ने का डर रहता है।"

राम उठ कर माता कौशल्या के पास गए। माता को प्रणाम करके उन्होंने राजतिलक की सब बातें सुनाई। माता ने पुत्र हृदय से लगा लिया और हर्ष से फूली न समाई। फिर वे मंगलगान और दान पुण्य में लग गई। वह शुभ समाचार नगर में फैल गया। नगर सजने लगा और चारों ओर आनंद मनाया जाने लगा।

इधर एक ओर तो अभिषेक की तैयारी हो रही थी, उधर दूसरी ओर ही कुचक्र चल रहा था, इस कुचक्र को चलाने वाली थी कैकेयी की मुँहलगी दासी मंथरा। वह जैसी कुरूप और कुबड़ी थी, वैसी ही कुटिल भी थी।

मंथरा को जैसे ही राम के अभिषेक का समाचार मिला, वह तत्काल कैकेयी के महल में पहुँची और बोली, ''अरी मेरी रानी। तू कैसी बेसमझ है! मौत तेरे सिर पर नाच रही है और तू सुख की नींद सो रही है।'' कैकेयी ने चौंक कर पूछा, ''मंथरा क्या बात है ? साफ क्यों नहीं बताती? राम तो कुशल से है? क्या भरत का कोई समाचार आया है?'' मंथरा बोली, ''और तो सब ठीक है। बस तुम्हारे सुख-सौभाग्य का

नामु मंथरा मंदमति, चेरी कैकेयी केरि।
अजस पेटरी ताहि करि, गई गिरा मनि फेरि॥

अंत होने वाला है। भरत को ननिहाल भेजकर राजा कल ही कौशल्या-पुत्र राम को राजकाज सौंपने जा रहे हैं।''

''यह सुनते ही कैकेयी बोली, इससे अधिक प्रसन्नता की बात क्या होगी! मेरे लिए जैसे भरत वैसे राम। ले, यह हार मैं तुझे उपहार में देती हूं।''

मंथरा ने हार लेकर फैंक दिया और बोली, ''भोली रानी, अक्ल से काम लो। मुझे तो यह देखकर आश्चर्य होता है कि तुम्हें अपने निकट का संकट भी दिखाई नहीं देता। राज पाकर राम भरत को जिन्दा न रहने देंगे। भरत से उनकी लाग-डाट रहती है। कौशल्या राजमाता होंगी और तुम उनकी दासी बनोगी।'' कैकेयी फिर भी विचलित न हुई। तब लम्बी सांस लेकर मंथरा फिर बोली, ''पगली रानी, राम के राजा होते ही भरत मारे-मारे फिरेंगे। राजा के विशेष प्रिय होने के मद में तुमने कौशल्या के साथ कैसे-कैसे दुर्व्यवहार किए हैं यह तुम जानती ही हो। राजमाता होते ही वे उन सबका तुमसे बदला लेंगी। इस संकट से बचने का एक ही उपाय है कि किसी तरह राम को वन भेज दिया जाए और भरत का राजतिलक हो।''

अब कैकेया की बुद्धि पलटी। अपना कार्य सिद्ध होते देख मंथरा बोली- ''रानी याद करो, एक बार शंबासुर के विरुद्ध इन्द्र की सहायता करने के लिए महाराज गए थे। तुम भी पति के साथ गई थी। तुम्हीं ने रणक्षेत्र में राजा के प्राणों की रक्षा की थी। राजा ने प्रसन्न होकर तुम्हें दो वरदान मांगने को कहा था। वे दोनों वरदान तुमने अब तक नहीं मांगे। अब मांग लो। कोप भवन में जा बैठो और जब राम की सौगंध खाकर राजा वचन दे तब एक वरदान से भरत का राजतिलक और दूसरे से राम को चौदह वर्ष का बनवास मांग लो। कैकेयी ने ऐसा ही किया।

रात को जब दशरथ कैकेयी के महल में पहुंचे तो उनकी रानी के कोप भवन में जाने का समाचार मिला। इस खबर से राजा के प्राण सूख गए। कैकेयी उनको प्राणों से भी अधिक प्यारी थी। वे उसके शरीर

पर हाथ फेर कर मनाने लगे। राजा ने कहा- ''तू क्यों ऐसी रूठी पड़ी है ? तुझे मालूम है कि तेरी प्रसन्नता के लिए मैं रंक को राजा और राजा को रंक बनाने के लिए तैयार हूं। यदि किसी ने तेरा अहित किया तो उसका सिर अभी कटवा दूं। मैं अपने सारे पुण्यों और प्राणप्यारे राम की शपथ लेकर कहता हूं कि तू जो कहेगी, वही करूँगा।''

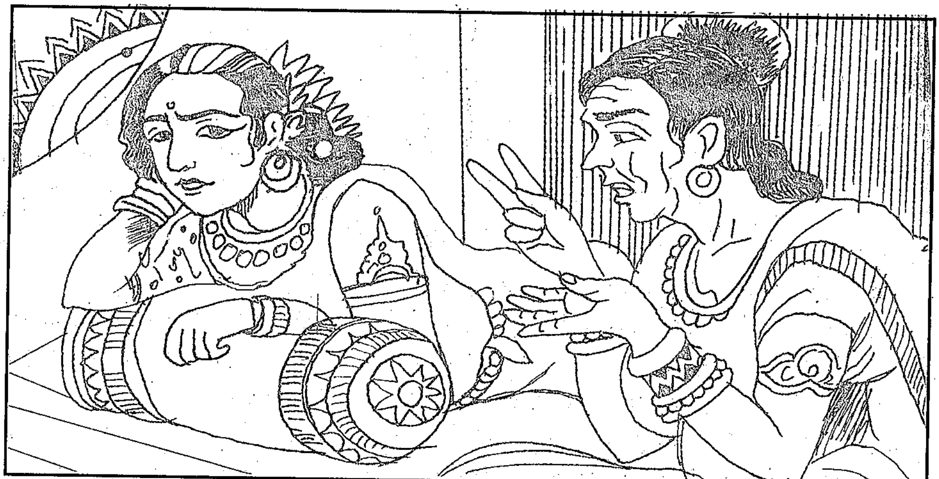

चलेउ सुमंत्र राम रूख जानी, लखी कुचाल कीन्हि कुछ रानी।

राजा ने जब राम की शपथ ले ली, तो कैकेयी ने दोनों वरदान मांगे। राम के वनवास की बात सुनकर राजा सन्न रह गए और शोक के कारण मूर्छित हो गए। कुछ देर बाद जब वे होश में आए, 'राम' 'राम' कहकर उठ बैठे और कैकेयी को तरह-तरह से समझाने लगे। वे कैकेयी से बोले, ''भरत को बुलाकर मैं उसका राजतिलक कर दूंगा, पर मेरे राम पर दया करो, मुझ पर दया करो।''

कैकेयी किसी तरह न मानी। वह बोली, ''राजन् आपकी बात रघुवंशियों जैसी नहीं है। आपके पूर्वजों ने सत्य पालन के लिए न जाने कितने कष्ट झेले। हरिश्चन्द्र और शिवि का नाम इसी कारण आदर से लिया जाता है। सत्य ही संसार में ईश्वर है। धर्म भी सत्य पर टिका है। सत्य से बढ़कर और कोई नहीं। सत्य को छोड़कर आप संसार को कैसे मुँह दिखाएंगे। रही मेरी बात, अगर आप वरदान नहीं देते, तो मैं आत्महत्या कर लूंगी और आप इस कलंक और अपयश का भार जीवनभर ढोते रहेंगे।'' राजा समझ गए कि अब कुछ होने वाला नहीं।

राजा रातभर बेसुध से पड़े रहे। सवेरा होने पर सुमंत्र कैकेयी के महल में समाचार लेने आए। राजा की दशा देखकर वे समझ गए कि कैकेयी ने कोई कुचाल की है। सुमंत्र ने कैकेयी से राजा के दुःख का कारण पूछा। कैकेयी बोली- ''मैं कुछ नहीं जानती। राम को ही वे अपने मन की बात बताएंगे।''

राजा का संकेत पाकर सुमंत्र राम को बुलाने गए। थोड़ी देर में लक्ष्मण के साथ राम आ गए। राम को देखते ही दशरथ बेसुध हो गए और कुछ बोल न सके। तब कैकेयी ने राम को सब बातें बताई। अपने वरदान की भी बात बताई। पिता का रुख देख कर राम ने दृढ़ता से कहा- ''पिता जी की प्रतिज्ञा की रक्षा के लिए अभी वन जाता हूं। भरत को बुलवाकर उसका राजतिलक कर दीजिए। मैं भाई भरत के लिए सब कुछ छोड़ता हूं।''

अब राम अपनी माता कौशल्या के पास गए और उनको कैकेयी के भवन की सब बातें बताई। यह समाचार सुनकर कौशल्या बेसुध-सी हो गई और अपने कर्मों को दोष देने लगी- ''मैं निरन्तर कैकेयी की

सेवा में लगी रहती थी, लेकिन उसकी दासी के बराबर भी कभी मेरी इज्जत नहीं हुई। सोचा था कि जब पुत्र का राज होगा, तब मेरे दिन पलटेंगे, पर वह भी नहीं हुआ।'' माता कौशल्या का दु:ख देखकर लक्ष्मण के क्रोध की आग भड़क उठी। श्रीराम ने लक्ष्मण को समझा-बुझाकर शांत किया और कहा- ''मेरे वन जाने की तैयारी करो।''

माता के चरण छूकर राम ने वन जाने की आज्ञा मांगी। कौशल्या ने कहा- ''मैं तुम्हें वन जाने से रोकती हूं। तुम्हारे पिता कैकेयी के बहकावे में आ गए हैं। जब तुमने कोई अपराध ही नहीं किया, तब वन क्यों जाओ! राजा की आज्ञा अनुचित है। उसे मत मानो।'

राम ने नम्रता से उत्तर दिया- ''मां! पिता की आज्ञा मुझे माननी चाहिए और तुम्हें भी माननी चाहिए। उनकी आज्ञा का उल्लंघन करना मेरी शक्ति के बाहर है। अब मुझे वन जाने की अनुमति दो और आर्शीवाद दो।'' लक्ष्मण से उन्होंने कहा- भैया! भाग्यवश जीवन में ऐसे उल्ट-फेर, उतार चढ़ाव आते रहते हैं। इसमें किसी का दोष नहीं- न राजा का और न माता कैकेयी का''

भाग्य की बात लक्ष्मण को बिल्कुल अच्छी नहीं लगी। वे तमककर बोले- ''भाग्य के भरोसे तो जीना कायरों का काम है। जीवन उसी का सफल है जो अपने भरोसे जीता है। अपने बाहुबल से आप राज सिंहासन पर बैठें। अगर किसी ने विरोध किया तो मैं अयोध्या में आग की वर्षा कर दूँगा।'' श्रीराम ने लक्ष्मण को समझाया मेरे लिए जैसा राज सिंहासन वैसा ही वन। अधर्म का राज्य मुझे नहीं चाहिए। तुम जो कह रहे हो, वह आर्यों के अनुकूल व्यवहार नहीं है। लक्ष्मण चुप हो गए, कौशल्या रो कर राम से लिपट गई और कहने लगी, जाते ही हो तो मुझे भी साथ ले चलो। राम ने उन्हें समझा बुझा कर शांत किया और वन जाने की अनुमति मांगी। माता ने कहा- ''बेटा! जाओ जिस धर्म का तुम पालन कर रहे हो, वही तुम्हारी रक्षा करे। मेरे व्रत पूजन का सब फल तुम्हें मिले, सब दिशाएं तुम्हारे लिए मंगलमय हो। मेरा रोम रोम तुम्हें आशीर्वाद देता है।

माता से विदा लेकर राम सीता के पास गए। सारा हाल बताकर सीता से भी उन्होंने विदा मांगी, यह भी कहा कि माता बूढ़ी हैं, उनकी देखभाल करना और भरत का रुख देखकर काम करना। वे कुल के

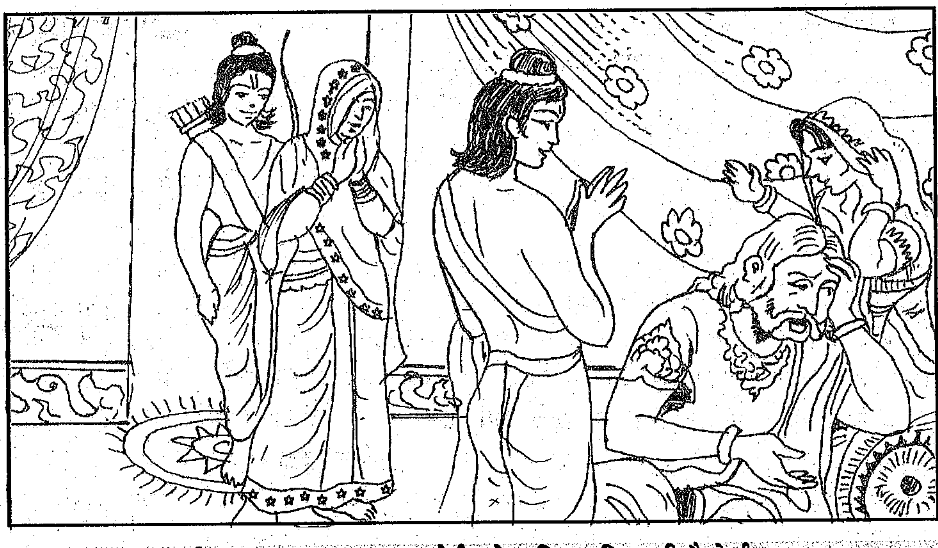

सीय सकुच बस उतरू न देई, सो सुनि तमकि उठी कैकेई।
लो विकल मुरछित नरनाहूं, कहा करिअ कछु सूझ न काहू॥

स्वामी होंगे और राजा भी। उनके सामने मेरी प्रशंसा भूलकर भी न करना, क्योंकि प्रभुता वाले लोग अपने सामने दूसरों की प्रशंसा सहन नहीं कर सकते। चौदह वर्ष बाद हम तुम फिर मिलेंगे।

इस समाचार से सीता व्याकुल हो गई, फिर संभलकर बोली- मुझे छाया की भांति तुम्हारे साथ रहने का पिता से आदेश मिला है। इसे तुम जानते ही हो। मैं भी वन को चलूँगी। राम ने उन्हें बहुत तरह से समझाया-बुझाया। जब वे किसी तरह न मानीं, तो राम ने कहा- तुरंत चलने के लिए तैयार हो जाओ। तभी लक्ष्मण भी वहां आ गए और उन्होंने भी साथ चलने का आग्रह किया। अंत में राम को उन्हें भी साथ चलने की अनुमति देनी पड़ी। लक्ष्मण से उन्होंने कहा कि माता से अनुमति लेकर गुरु वशिष्ठ के घर जाओ। वहां से मेरे सुरक्षित दिव्य अस्त्र-शस्त्र ले आओ।

माता से अनुमति लेकर और गुरु के यहां से अस्त्र-शस्त्र लेकर लक्ष्मण लौट आए। इधर श्रीराम ने अपना और सीता का सारा सामान ब्राह्मणों और सेवकों में बांट दिया। सीता और लक्ष्मण को लेकर वे पिता के पास विदाई के लिए चल दिए।

राम वन-गमन का समाचार सारी अयोध्या में फैल चुका था। राम लक्ष्मण और सीता को राजा के महल की ओर जाते देखकर नगरवासी दशरथ और कैकेयी को धिक्कारने लगे। उधर महल में राजा दुःख से तड़प रहे थे। उन्होंने कौशल्या और सुमित्रा को अपने पास बुला लिया था। राम ने सबसे विदा मांगी। राजा ने उठने की कोशिश की, पर वे गिर पड़े और मूर्छित हो गए। जब उनकी मूर्छा जगी तो राम ने विदा मांगी और कहा- सीता और लक्ष्मण भी मेरे साथ जाने का आग्रह कर रहे है। हम लोगों के लिए शोक न करें।

राजा दशरथ ने कहा- बेटा, कैकेयी ने मेरी मति हर ली है। तुम मुझे पकड़कर बंदीघर में डाल दो और अयोध्या के राजा बन जाओ। राम ने बड़ी नम्रता से कहा पिता जी मुझे राज्य लोभ बिल्कुल नहीं है। यदि मैं वन न जाऊँ तो आप का वचन भी मिथ्या होगा। रघुकुल की रीति मिट जाएगी। मुझे वन जाने दीजिए। कैकेयी बीच-बीच में राजा दशरथ को फटकारती जाती थी। राम को छाती से लगाकर राजा मूर्छित हो गए। इतने में कैकेयी वल्कल वस्त्र ले आई और राम से बोली- लो, इन्हें पहनकर वन जाओ।

राम ने राजसी वस्त्र उतार दिए और वल्कल वस्त्र पहन लिए। सीता को भी कैकेयी ने तपस्विनी के वस्त्र दिए। यह देखकर लोग राजा दशरथ और कैकेयी को तरह-तरह से धिक्कारने लगे। सीता से लिपटकर रानियाँ रोने लगीं। राजा भी अपना सिर नीचे कर रोने लगे। सुमित्रा ने लक्ष्मण को आशीर्वाद दिया और कहा- ''सीता -राम को ही तुम अपने माता-पिता समझना! इनकी रक्षा के लिए अपने प्राण देने से भी न हिचकिचाना। जाओ वीर पुत्र! जाओ! निश्चिन्त होकर सीता राम के साथ जाओ।'' राम ने तब फिर अनुमति मांगी और सीता तथा लक्ष्मण को लेकर वे चल दिए। अंत:पुर की सब स्त्रियाँ रोती-बिलखती उनके पीछे-पीछे चलीं।

नगर के द्वार पर सुमंत्र रथ लिए खड़े थे। राम लक्ष्मण और सीता रथ पर चढ़ गए। राम के आदेश से सुमंत्र ने वेग से रथ हांका। प्रजा और रानियाँ रथ के पीछे-पीछे दौड़ने लगीं। राजा दशरथ और माता कौशल्या ने भी रथ के पीछे दौड़ना शुरू किया 'राम! राम! मेरे राम! हे लक्ष्मण! हे सीता! की पुकार दसों दिशाओं में फैल गई। अब राजा दशरथ को रथ की धूल भी दिखाई नहीं देती थी। राजा हताश होकर गिर पड़े। रानियाँ उन्हें उठाकर कौशल्या के भवन में ले गई। राजा कभी बेसुध हो जाते और कभी ''राम! राम !'' कह चिल्ला उठते । सारी अयोध्या नगरी शोक सागर में डूब गई। घर, बाजार और गलियों में सन्नाटा छा गया। मनुष्यों की तो क्या पशु-पक्षियों ने भी खाना-पीना छोड़ दिया। उधर नगरवासियों की एक भारी

भीड़ रथ के पीछे–पीछे दौड़ रही थी समझाने–बुझाने पर भी जब लोग न लौटे, तब राम लक्ष्मण भी रथ से उतर कर उनके साथ पैदल ही चलने लगे। संध्या होते–होते वे तमसा नदी के किनारे पहुँचे और वहीं रात बिताने का निश्चय किया। सीता और राम माता–पिता की आज्ञा का पालन करते हुए तृण शय्या पर विश्राम करने लगे। कुछ दूर पर लक्ष्मण धनुष बाण लेकर पहरा देने लगे। सुमंत्र भी उनके पास जा बैठे। थके मांदे पुरवासी घोर निद्रा में सो गए। पहर रात रहते ही राम उठे और सुमंत्र को बोले– तात! लोगों का कष्ट मुझ से नहीं देखा जाता! शीघ्र रथ तैयार करो और इस प्रकार हांको कि जगने पर लोगों को पता न लगे कि रथ किधर गया। सुमंत्र ने ऐसा ही किया। सवेरा होने पर जब लोगों की आँखें खुली तो देखा कि राजकुमार नहीं है। वे इधर–उधर दौड़कर उन्हें खोजने लगे। जब कही पता न लगा तो निराश होकर नगर को लौट गए।

वन–यात्रा

रामचन्द्र जी का रथ दक्षिण की ओर चला और सवेरा होते–होते काफी दूर निकल गया। हरे–भरे खेतों और फल–फूले वनों को देखते–दिखाते राम–लक्ष्मण–सीता गोमती नदी के किनारे पहुंचे। उसे पार कर के वे आगे बढ़े और सई नदी तक पहुंचे। सई को पार कर वे थोड़ी देर के लिए रुक गए। कौशल राज्य की सीमा वहाँ समाप्त होती थी। राम ने मुड़कर जन्मभूमि की ओर देखा। आंखों में आंसू भर वे सुमंत्र से बोले– तात! न जाने वह दिन कब आएगा जब मैं अपने माता–पिता से फिर मिलूँगा और सरयू के पवित्र तट पर घूमूँगा। अयोध्या नगरी की ओर मुँह करके राम हाथ जोड़कर खड़े हो गए और कहने लगे– जननी जन्मभूमि! मेरे अपराध क्षमा करना! चौदह वर्ष के बाद ही अब तुम्हारे दर्शन कर सकूँगा। तभी सीमा प्रान्त के बहुत से नर–नारी वहाँ इक्कट्ठे हो गए। वे राजा दशरथ को धिक्कारते थे और कहते थे– ऐसे पापी राजा के राज्य में रहना ठीक नहीं। चलो राम के साथ चलें। लोगों की ऐसी प्रीति देखकर राम की आँखें डबडबा आई। सबको उन्होंने समझाया–बुझाया और वे फिर आगे बढ़े। शाम होते–होते उनका रथ गंगा के किनारे श्रृंगवेरपुर गांव में जा पहुँचा। श्रृंगवेरपुर में इंगुदी वृक्ष के नीचे राम ठहर गए। श्रृंगवेरपुर में निषादों का राजा गुह रहता था। राम के आने की खबर पाकर वह स्वागत के लिए आया।

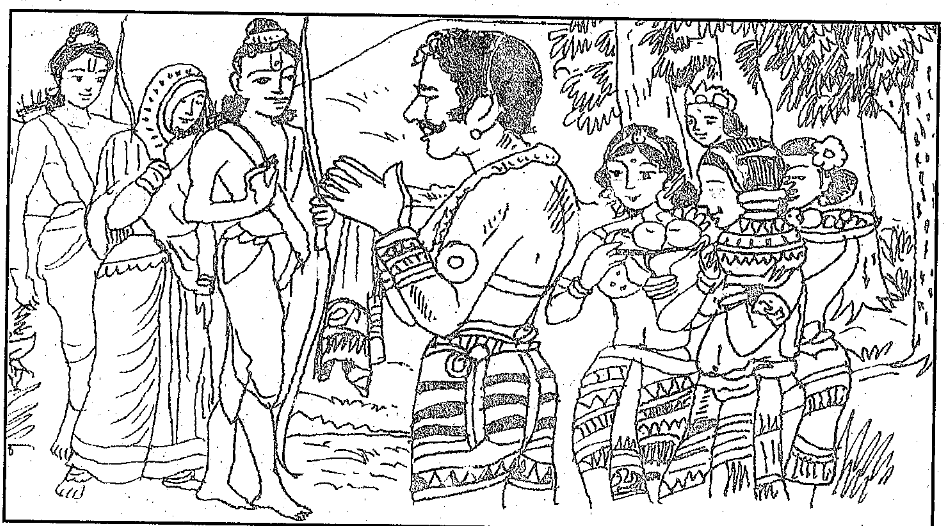

करि दंडवत भेंट धरि आगे, प्रभुहि बिलोकत अति अनुरागे।

उसके साथ अनेक बंधु-बांधव और सेवक भी थे। गुह को आते देख राम उठे और उससे गले मिले। गुह ने कहा- मेरा सौभाग्य कि आप यहां आए। श्रृंगवेरपुर को भी अपना ही घर समझें और सुखपूर्वक रहे। श्रीराम ने जब अपने वनवास की बात बताई तो उसको बहुत दु:ख हुआ।

उसने अपना राज्य राम के चरणों में अर्पित कर प्रार्थना की कि श्रृंगवेरपुर पर ही राज्य करें। श्रीराम ने निषादराज के प्रति कृतज्ञता प्रकट की। वे अपने व्रत पर दृढ़ रहे। उस दिन भी उन्होंने केवल जल पिया और वे तृण शय्या पर ही सोये। लक्ष्मण पहरे पर बैठ गए। गुह और सुमंत्र भी लक्ष्मण के पास ही बैठ गए। उनमें रातभर अयोध्या और श्रीराम के विषय में बातें होती रहीं।

अगले दिन श्रीराम ने सुमंत्र से कहा- मंत्रिवर! अब आप अयोध्या लौट जाइए। पिताजी और माताओं के चरणों में हमारा प्रणाम कहिए, और उन्हें बता दीजिए कि चौदह वर्ष के बाद हम अवश्य लौट आएंगे। भरत से कह दीजिए कि सब माताओं से एक-सा व्यवहार करें और राजा को प्रसन्न रखें। इस प्रकार सुमंत्र को राम ने समझा-बुझा कर विदा किया।

तब राम ने बरगद का दूध मंगाकर जटाएं बनाई। गुह से विदा लेकर वे सीता और लक्ष्मण के साथ नाव में बैठे और गंगा पार वत्सदेश में पहुंचे। आगे-आगे लक्ष्मण, बीच में सीता और सबसे पीछे राम-इस क्रम में वे दुर्गम मार्गों पर चलते हुए आगे बढ़े। शाम को फिर एक पेड़ के नीचे ठहर गए। लोगों ने कंद-मूल-फल खाए। तब राम ने लक्ष्मण से कहा- राज्य की मुझे कोई चिन्ता नहीं। मुझे माता की चिन्ता है, उनको मुझ से दुख ही मिला। मैं कोई सेवा न कर सका। लक्ष्मण तुम सवेरा होते ही अयोध्या लौट जाओ और माता कौशल्या और माता सुमित्रा की देखभाल करो। लक्ष्मण ने बड़ी देर तक राम को समझा-बुझा कर ढाढस बंधाया। सीता राम के सो जाने पर लक्ष्मण पहरे पर बैठ गए।

अगले दिन वे फिर चले और गंगा यमुना के संगम पर महर्षि भरद्वाज के आश्रम में पहुंचे। भरद्वाज ने उनको आदरपूर्वक ठहराया। अगले दिन भरद्वाज से विदा लेकर राम-लक्ष्मण और सीता आगे बढ़े। यमुना नदी पार कर दो दिन की यात्रा के बाद वे चित्रकूट जा पहुँचे। चित्रकूट में हरे-भरे पर्वत राम को बड़े अच्छे लगे। उन्होंने लक्ष्मण से कहा अब हम यहीं कुछ दिन तक निवास करेंगे। लक्ष्मण ने मंदाकिनी नदी के किनारे एक सुन्दर पर्णकुटी बना दी। राम लक्ष्मण और सीता वहां रहने लगें।

अयोध्या में हाहाकार

सुमंत्र खाली रथ लेकर अयोध्या पहुंचे। लोग दौड़-दौड़ कर पूछते-मंत्रीवर, राम कहां है? राम-लक्ष्मण और सीता को कहां छोड़ आए ? सुमंत्र नीची गर्दन किए बिना बोले ही राजमहल की ओर बढ़ते गए। उन्हें अकेला आते देख कर रानियाँ भी जोर-जोर से रोने लगी। राजा ने पूछा- बेटा राम कहां है ? पुत्री सीता न जाने कैसे रहती होगी ? राजा अनाथ की तरह रोने लगे। सुमंत्र ने भी रोते-रोते सब हाल कह सुनाया। कौशल्या छाती पीट-पीटकर रोने लगी। राजा दशरथ ने अपने अपराध के लिए कौशल्या से क्षमा मांगी।

राम को अयोध्या से गए छ: दिन हो गए थे। तब से राजा दशरथ भी यों ही पड़े थे। आधी रात होने को आई तब उनको श्रवण कुमार के पिता द्वारा दिये गये श्राप की याद आई। उन्होंने कौशल्या से कहा- एक बात मैंने तुमको अब तक नहीं बताई, आज बताता हूँ। हमारे-तुम्हारे विवाह के पहले की घटना है, एक बार वर्षा ऋतु में सरयू नदी के किनारे मैं शिकार खेलने गया। उन दिनों शब्द - भेदी बाण चलाने का मुझे बड़ा शौक था। अंधेरा हो चला था। एकाएक नदी में से हाथी के पानी पीने की-सी आवाज आई।

उसी को लक्ष्य करके मैंने बाण चला दिया। तभी मनुष्य के तड़पने की आवाज आई। मैं घबराया हुआ वहां पहुँचा तो देखा कि एक तपस्वी बालक घायल हुआ कराह रहा है। पास में एक घड़ा भी पड़ा है। वह रोते-रोते बोला, ''मेरे अंधे मां-बाप प्यासे उस आश्रम में बैठे मेरी राह देख रहे होंगे। कृपा कर उनके लिए पानी लेते जाइए।'' इतना कहकर उसने दम तोड़ दिया। मैं जल लेकर आश्रम में गया । मेरी आहट पाकर उसके बूढ़े बाप बोले बेटा श्रवण! इतनी देर कहां लगाई। मेरी जीभ लड़खड़ा रही थी। मैं डरते-डरते बोला- मैं श्रवण कुमार नहीं हूँ। अयोध्या का राजा दशरथ हूँ। गलती से मेरा बाण उसे लग गया है और अब वह इस संसार में नहीं है। यह सुनकर वे करुण विलाप करने लगे। मेरे साथ वे नदी के तट तक आए। उन्होंने पुत्र को श्रद्धांजलिं दी और मुझे शाप दिया, ''हे राजन्! पुत्र वियोग में जैसे आज हम मर रहे हैं, वैसे ही तड़प-तड़प कर तुम भी मरोगे,'' और उन दोनों ने उसी समय प्राण त्याग दिए।

कौशल्या! लगता है उस शाप के सच होने का समझ अब आ गया है। मेरे प्राण मानों कोई खींच रहा है। हाय, मैं मरते समय प्यारे पुत्र का मुँह भी न देख सका। मैं बड़ा अभागा हूँ। अपने किये का फल भोग रहा हूँ। हे राम! हे राम! कहते हुए दशरथ ने प्राण त्याग दिए। रानियाँ राजा के बलपौरुष का वर्णन करती हुई करुण स्वर में विलाप करने लगी।

मंत्रियों ने राजा के शव को तेल के कड़ाहे में रखवा दिया। फिर मंत्रिपरिषद् ने विचार कर के भरत को बुलवाने का निश्चय किया। हवा की गति से चलने वाले घोड़ों पर दूत भेजे गए। उनसे कह दिया था कि कैकेय देश में पहुँचकर केवल इतना ही कहें कि आवश्यक कार्यवश गुरु ने भरत को तुरंत बुलवाया है।

ननिहाल में भरत का मन उचट रहा था। तरह-तरह की बातें उनके मन में उठती थीं। जैसे ही उनको दूतों से संदेश मिला, वे नाना-मामा से विदा लेकर शत्रुघ्न के साथ अयोध्या को चल पड़े।

नदी, पर्वत लाँघते हुए आठवें दिन वे अयोध्या पहुँचे। नगर में चारों ओर सन्नाटा था। बाजार बंद थे। नगरवासी भरत को देखकर मुंह फेर लेते थे। भरत घबराए हुए अपनी माता के महल में गए और ननिहाल का कुशल समाचार बताकर पिता और भाई राम के बारे में पूछने लगे। कैकेयी ने हंस कर कहा- तुम्हारे पिता तो स्वर्ग चले गए। वे इस पृथ्वी का सुख भोग चुके थे। उनके बारे में चिन्ता न करो। भरत फूट-फूट कर रोने लगा। फिर उन्होंने पूछा- भाई राम कहां है? कैकेयी ने हंस-हंस कर अपने वरदान तथा राम-लक्ष्मण और सीता के वन जाने की सारी बातें कह सुनाई वह बोली- बेटा भरत, मैंने तुम्हारे लिए ही यह सब कुछ किया है। अब चिन्ता छोड़कर अयोध्या की राज्य लक्ष्मी का भोग करो।

भरत को माता पर बड़ा रोष आया। वे बोले-पापिन तूने यह क्या किया ? इक्ष्वाकु वंश की तूने नाक काट दी। ऐसा ही करना था तो मुझे जन्मते ही क्यों न मार डाला। इस बीच राज्य के मंत्री वहाँ आ गए थे। उनके सामने भी उन्होंने कैकेयी को बहुत भला बुरा कहा। वे बोले- मन्त्रियो! आप भी सुन लें, मेरी मां ने जो कुछ किया है उसमें मेरा कोई हाथ नहीं है। मैं शपथ पूर्वक कहता हूँ। यह कह कर भरत तुरंत ही माता कौशल्या के पास चल दिए और उनसे लिपटकर बच्चे की तरह बिलख-बिलखकर रोने लगे। माता ने उन्हें धीरज बंधाया। फिर वे पछाड़ खाकर भूमि पर गिर पड़ी। भरत ने माता को भी तरह तरह से साँत्वना दी। रात भर भरत, पिता और भाई राम को याद करके रोते रहे। उन्होंने माता के सामने सैकड़ों तरह की सौगंधे खाई और कहा कि जो पाप कर्म कैकेयी ने किया है उसका मुझे पूरा पता भी नहीं। जिसकी सम्मति से यह हुआ है, उसकी बुरी गति हो।

सवेरा होने पर राजा दशरथ का चंदन की चिता पर दाह संस्कार किया गया। भरत ने सब अंतिम संस्कार गुरु के बताए अनुसार विधिवत् किया। अगले दिन मंत्रियों और नगरवासियों को बुलाकर भरत ने

कहा- अयोध्या का राज्य सबसे बड़े भाई राम का है। हम आप सभी उन्हीं के हैं। राम को लौटा लाने के लिए मैं कल चित्रकूट जाऊँगा। आप भी चलें। माताएं भी चलेंगी। प्रजा भी चलेगी और साथ में चतुरंगिणी सेना भी रहेगी। गुरु वशिष्ठ जी से भी चलने के लिए प्रार्थना करूँगा।

भरत की चित्रकूट - यात्रा

अयोध्या की चतुरंगिणी सेना लेकर मंत्रियों सहित भरत चित्रकूट को चल दिए। नगर के धनी-मानी व्यक्ति भी साथ थे। सेना के चलने से सूने मार्ग कोलाहल से भर गए और आकाश में इतनी धूल छा गई कि सूरज तारे की भांति टिमटिमाने लगा। शाम तक वे श्रृंगवेरपुर जा पहुंचे। वहीं गंगा तट पर सेना ने पड़ाव डाल दिया। निषादराज गुह ने सेना की पताकाओं से जान लिया कि यह अयोध्या की चतुरंगिणी सेना है। उसने अपने साथियों से कहा कि मालूम होता है कि भरत के ऊपर अब राजमद सवार हो गया है। राम को वन में मार कर वे अकंटक राज्य करना चाहते है। यह तो मैं जीते जी नहीं होने दूँगा। वह बोला-भाइयों मरने-मारने के लिए तैयार हो जाओ। आज भरत की सेना से लोहा लेना है। मैं जानता हूँ कि हम लोग उसका मुकाबला किसी प्रकार नहीं कर सकते। परंतु हमारा धर्म है कि प्राण रहते उसको गंगा पार न होने दें। एक न एक दिन मरना तो सबको है ही! फिर राम का काम, रणभूमि में वीरगति और गंगा का किनारा। इससे बढ़कर और क्या हो सकता है ? हमारे पास पांच सौ नावें हैं! हर नाव पर सौ-सौ सैनिक बैठ जाएं और नावें घेर लें। मैं आगे भेद लेता हूँ। अगर भरत भाई से मिलने जा रहे होंगे, तो हम उनकी सहायता करेंगे और अगर उनके मन में कोई पाप है तो आज गंगा में रक्त की धार बहेगी। मेरे संकेत की प्रतीक्षा करना।

इतना कहकर निषादराज ने बहुत-सा भेंट का सामान लिया और आगे बढ़े। भरत निषादराज के प्रेम को जानते थे। वे लपक कर उसके गले मिले। भरत के मन की बात गुह ने जान ली। राम-लक्ष्मण के बारे में दोनों में बहुत देर तक बातें होती रही। राजा दशरथ की मृत्यु के समाचार से निषादराज दुःखी हुआ। निषाद के साथ भरत उस इंगुदी वृक्ष के नीचे गए जहां राम ने रात बिताई थी। भरत ने उस स्थान को प्रणाम किया और वहां की धूल अपने माथे से लगाई। गुह ने लौटकर साथियों को सब समाचार सुनाए।

अगले दिन प्रातः काल पांच सौ नावें सेना को पार उतारने के लिए घाट पर लग गई। सेना सहित भरत ने गंगा पार की। नाव पर बैठने से पहले भरत ने भी राम की तरह बरगद के दूध से जटा बनाई और वल्कल वस्त्र पहन लिए। गुह को साथ लेकर वे प्रयाग की ओर बढ़े। भरत के साथ इतनी बड़ी सेना देखकर महर्षि भरद्वाज को भी शंका हुई, परन्तु भरत के व्यवहार से उनका संदेह दूर हो गया। भरद्वाज ने भरत को यह बता दिया कि राम किस मार्ग से चित्रकूट गए हैं। वह रात भरत ने भरद्वाज के आश्रम में ही बिताई।

प्रातः काल होते ही भरत का दल चित्रकूट के लिए चल पड़ा। चलते-चलते चित्रकूट पर्वत उन्हें दिखाई दिया। सारा वन प्रदेश कोलाहल से भर गया। वन के जीव-जन्तु, पशु-पक्षी इधर-उधर भागने लगे। कुछ दूरी पर धुआं उठते देख गुह ने अनुमान लगाया कि वहीं कहीं राम की कुटिया होगी।

इधर राम को भी आकाश में धूल उड़ती दिखाई दी। पशु-पक्षी भी भाग रहे थे। अब कुछ-कुछ कोलाहल भी समीप आता सुनाई पड़ने लगा। राम ने लक्ष्मण से कहा- भाई ऊँचे वृक्ष पर चढ़कर देखो तो क्या बात है ? लक्ष्मण ने चढ़कर देखा-दूर चतुरंगिणी सेना आ रही है। उन्होंने पताकाएं देख कर जान लिया कि अयोध्या की सेना है। वे बोले- आर्य! जानकी माता को सुरक्षित स्थान पर पहुंचाकर धनुष-बाण

उठाइए। मालूम पड़ता है, भरत हमें वन में भी नहीं रहने देगा। आज मैं सबका बदला लूँगा। भरत को भाई समेत समर भूमि में सुलाकर कैकेयी और मंथरा को भी जिंदा नहीं छोड़ूँगा। पेड़ से उतर कर लक्ष्मण धनुष-बाण लेकर तैयार हो गए। उन्हें उत्तेजित देखकर राम बोले- लक्ष्मण, वीर पुरुष, धैर्य और समझदारी से काम लेते हैं। उतावली न करो। भरत साधु स्वभाव के हैं। मेरा मन कह रहा है कि वे मुझे मिलने ही आ रहे हैं, लड़ने नहीं। तुम यह जानते ही हो कि मुझे राज्य का लोभ नहीं है। भरत को मारकर मैं स्वर्ग का भी राज्य नहीं चाहता। हां, यदि तुम्हें राज्य की कामना हो तो तुम्हें भरत से अयोध्या का राज्य दिलवा दूँगा। मुझे भरत पर पूरा भरोसा है। लक्ष्मण शांत हो गए।

इधर भरत सेना को ठहरा कर शत्रुघ्न के साथ आगे बढ़े। उन्होंने देखा कि तेजस्वी राम एक शिला पर बैठे हैं। पास में ही सीता और लक्ष्मण भी बैठे हैं। वे व्याकुल होकर राम के चरणों पर गिर पड़े। भरत को देखकर राम भी हड़बड़ा कर उठे। कहीं धनुष गिरा, कहीं बाण और कहीं उत्तरीय। उन्होंने भरत को उठा कर छाती से लगा लिया। दोनों की आंखों से प्रेम धाराएं बहने लगी। भाई से मिलकर भरत ने सीता जी के चरणों में प्रणाम किया। सीता जी का आशीर्वाद पाकर भरत को बड़ा संतोष हुआ, फिर वे लक्ष्मण से गले मिले। शत्रुघ्न ने भी राम, लक्ष्मण और सीता जी के चरणों में प्रणाम किया।

गुरु और माताओं के आने का समाचार पाकर राम-लक्ष्मण उनसे मिलने गए। शत्रुघ्न को सीता जी के पास छोड़ दिया। गुरु के चरणों में प्रणाम कर माताओं से मिले । अपने कटुँबियों और नगरवासियों से भी बड़े स्नेह से मिले। सबका ठहरने का यथावसर प्रबन्ध करके श्रीराम अपनी कुटी पर लौट आए। सीता को मुनि वेश में देखकर माताएं बड़ी दुःखी हुई। अब कैकेयी भी मन ही मन पछता रही थी। जब पिता जी की मृत्यु का समाचार राम को मिला तो सन्न रह गए और अपने ही को उनकी मृत्यु का कारण जानकर बड़ी देर तक रोते रहे। फिर वे मंदाकिनी तट पर गए। वहाँ उन्होंने पितृ-तर्पण किया और इंगुदी के फूलों से पिंड देते हुए वे बोले- "पिताजी! आपके वनवासी पुत्र के पास पिंड देने के लिए केवल यही है। इसे ग्रहण कर संतुष्ट हों और आशीर्वाद दें।

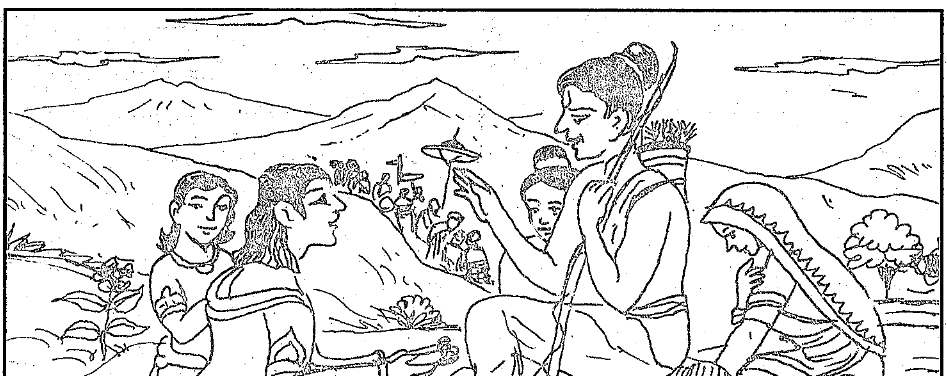

प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्ही, सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।
चरनपीट करूनानिधान के, जनु जगु जामिक प्रजा प्रान के॥

अगले दिन सब लोग राम के पास इक्कट्ठे हुए। भरत ने राम के चरणों पर सिर रखकर कैकेयी के अपराधों के लिए क्षमा मांगी और अयोध्या लौट चलने की प्रार्थना की। राम ने भरत को हृदय से लगा लिया और कहा, "जो कुछ हुआ उसमें न तो माता कैकेयी का दोष है और न तुम्हारा। जो कुछ होता है वह भगवान की इच्छा से होता है। सब अपने कर्मों का फल भोगते है। जहां तक मेरे लौटने की बात है, मैं चौदह वर्ष तक वन में ही रहकर पिता के वचन का पालन करूंगा। जिस पिता ने अपने वचन के लिए प्यारे पुत्र को वन भेज दिया और अपने प्राण भी दे दिए, उनके मरने के बाद मेरे लिए और तुम्हारे लिए भी वही उचित है कि उनके वचन का पालन करें। तुम अयोध्या में रहकर प्रजा-पालन करो और मैं चौदह वर्ष तक वन में वास करूं। चारों भाई अपना-अपना कर्त्तव्य करें और पिता के सत्य धर्म की रक्षा करें।" इस पर भरत ने कहा- "आपके स्थान पर चौदह वर्ष तक मैं वन में रहूँगा। मैंने भी मुनि वेश बना लिया है।"

माताओं ने, गुरुजनों ने और नगर और नगरवासियों ने भी अपनी-अपनी तरह राम से बहुत कुछ कहा, पर राम किसी तरह लौटने को तैयार नहीं हुए। उधर भरत भी हठ कर रहे थे। तब राम ने कहा, "कदाचित् तुम्हें पता न होगा। तुम्हारे नाना ने जब माता कैकेयी का विवाह पिता के साथ किया तब राजा से यह वचन लिया था कि उनके बाद कैकेयी का पुत्र ही अयोध्या का राजा होगा। अत: राज्य तुम्हारा ही है। फिर माता कैकेयी को दो वरदान भी मांगने को कहा था। यह तुमने सुना ही होगा। इसलिए तुम बिना किसी संकोच के अयोध्या पर राज करो।"

जब राम किसी तरह लौटने को तैयार नहीं हुए तब भरत ने स्वर्ण जड़ित खड़ाऊँ राम को पहनाकर कहा, "अब इन्हें मुझे दे दीजिए। चौदह वर्ष तक इनका ही राज रहेगा। इनकी आज्ञा से ही मैं राज-काज चलाऊंगा। अगर चौदह वर्ष बीतने पर आप न आएंगें, तो अगले ही दिन मैं आग में जलकर प्राण दे दूँगा।"

राम की खड़ाऊँ लेकर भरत ने सिर से लगा ली, राम ने भरत से कहा- "नीतिपूर्वक प्रजा का पालन करना। प्रजा को सुखी रखना राजा का सबसे पहला कर्त्तव्य है। सब माताओं से समान व्यवहार करना। मां कैकेयी को भी किसी तरह दु:ख न देना। तुमको मेरी और सीता की सौगंध है।" गुरुजनों और माताओं को प्रणामकर उन्होंने सबकी ओर आंखों में आंसू भरकर देखा। इस तरह भरत को विदा कर राम कुटी में लौट आए।

समाज सहित भरत अयोध्या को लौट चले। राम की चरण पादुकाओं को एक सुसज्जित हाथी पर सिंहासन में स्थापित कर वे अयोध्या को चल पड़े। चार दिन की यात्रा कर वे अयोध्या पहुंचे। राम की खड़ाऊं को उन्होंने राज सिंहासन पर स्थापित किया। मंत्रियों को उन्होंने राज-काज सौंपकर कहा कि राम की इन चरण पादुकाओं का ही शासन रहेगा। आप लोग यत्नपूर्वक ऐसे काम करें जिससे प्रजा में सुख-समृद्धि बढ़े। माताओं की देखभाल के लिए उन्होंने शत्रुघ्न को हिदायत दे दी। अयोध्या का सब प्रबन्ध करके भरत नगर के बाहर नंदिग्राम में मुनिवेश बनाकर रहने लगे। वहीं से वे आवश्यक देखभाल करते।

भरत के चले जाने के बाद राम-लक्ष्मण और सीता मंदाकिनी नदी के किनारे-किनारे दक्षिण की ओर बढ़े और अत्रि ऋषि के आश्रम में पहुंचे। इन तीनों ने ऋषि को प्रणाम किया। ऋषि ने भी उनको संतान की तरह अपनाया। उनकी पत्नी भगवती अनुसूया तपस्या और पातिव्रत्य धर्म के लिए प्रसिद्ध थीं। सीताजी ने आश्रम के भीतर जाकर उनके चरण छुए। अनुसूया ने पुत्र-वधू की भांति उनसे प्यार किया। सती अनुसूया

ने सीताजी को पति-सेवा का उपदेश दिया। सीताजी की पति सेवा से प्रसन्न होकर कुछ मांगने को भी उन्होंने कहा। सीताजी बोली- "आपकी दया से मुझे सब कुछ मिला है। अब क्या माँगू।" इस उत्तर से अनुसूया प्रसन्न हुई और उन्होंने सीता जी को दिव्य माला, दिव्य वस्त्र और आभूषण देकर कहा कि ये ना तो कभी मैले होंगे और न कभी नष्ट होंगे। सीता जी ने उन्हें ग्रहण किया। रात को उसी आश्रम में उन्होंने विश्राम किया।

प्रश्न

1. राजा दशरथ ने राम के राज्याभिषेक की किस प्रकार तैयारी की ?
2. भरत की अनुपस्थिति में ही राजा दशरथ राम का राज्याभिषेक क्यों करना चाहते थे ?
3. राजा दशरथ की मृत्यु का क्या कारण था ?
4. श्रीराम के वन गमन पर माता कौशल्या और अयोध्या के शोक का वर्णन करो।
5. भरत ने राजा होना क्यों स्वीकार नहीं किया ? राम को मनाने वे सब को लेकर चित्रकूट क्यों गए ?
6. निशादराज गुह से राम किस प्रकार मिले ? इस से राम के चरित्र के विषय में क्या पता चलता है ?
7. राम को लौटाने के लिए भरत ने क्या कहा ? राम क्यों नहीं लौटे ?
8. राम, लक्ष्मण और भरत के स्वभाव के विषय में पांच-पांच वाक्य लिखो।